Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language,
Online ISSN 2348-3083, SJ IMPACT FACTOR 2019: 6.251, www.srjis.com
PEER REVIEWED & REFERRED JOURNAL, JUNE-JULY, 2020, VOL- 8/40

भारत में छठ पर्व–सामाजिक समन्वयक एक नया संदर्श : लघु परम्परा से वृहद परम्परा की ओर

विमल कुमार लहरी , Ph.D.

असि. प्रोफेसर , समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय Email: vimalk.lahari1@bhu.ac.in

Abstract

प्रस्तुत शोध–पत्र अनुभवजन्य पद्धति पर आधारित है। जिसमें वैयक्तिक अनुभव के से प्राप्त तथ्यों, लोकजन के मतों एवं द्वितीयक स्रोतों को आधार बनाकर पूर्ण किया गया है। । इस शोध–पत्र में वस्तुतः यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि भारत में छठ पर्व जहाँ एक तरफ अपने लघु स्वरूप को खोते हुए वृहद परम्परा के रूप में स्थापित हो चुका है। साथ ही लोकजन इस पर्व के माध्यम से जीवन जीने का एक नया फलसफा प्रस्तुत कर रहा है।

प्रमुख शब्द *:सामाजिक समन्वय, लघु परम्परा, वृहद परम्परा, आधुनिकता, गतिशीलता जातीय सोपानक्रम, विश्वास, धार्मिक कर्मकाण्ड, प्राथमिक सम्बन्ध, संदर्श।*

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

परिचय एवं सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य

मानव सभ्यता अपनी यात्रा में परम्पराओं के साथ आगे बढ़ी है। मानव के बीच कोई भी ऐसा समाज दृष्टिगोचर नहीं होता है जो परम्परागत जीवन शैली से पोषित न रहा हो। इस संदर्भ में मिल्टन सिंगर और राबर्ट रेडफिल्ड के अध्ययन महत्वपूर्ण है। भारत में ही नहीं, वरन् दुनियां में ढेर ऐसी परम्पराएं रही हैं जो अपने लघु स्वरूप को खोते हुए वृहद स्वरूप को धारण कर चुकी ह। परम्पराएं जीवन संस्कृति का एक अंग ही नहीं होती है, वरन् समाज में प्रेम, बन्धुत्व एवं समन्वय को भी कायम रखती ह। इन्हीं परम्पराओं की कड़ी में भारत की छठ पर्व परम्परा को देखते हैं। यह परम्परा अपने लघु स्वरूप को खोते हुए आज वृहद परम्परा का रूप धारण कर चुकी है। भारत के अलावा दुनियां के अधिकांश देशों में बसे भारतीय छठ परम्परा की वैचारिकी को बहुतायत धारण करते देखा जा सकता है। छठ पर्व भारत की महत्वपूर्ण जीवन संस्कृति है जिसमें ऋग्वेद को आधार बनाकर सूर्य को आराधना की जाती है। वस्तुतः इस पर्व में काफी कठिन क्रिया–कलापों के भी बीच सूर्य को अर्घ्य दिया जाता है। यह परम्परा लैंगिक भेद को भी दूर करती है। इसमें महिलाओं, पुरुषों एवं बच्चों की भी भागीदारी होती है।

आज यह परम्परा उत्तर आधुनिकता के पायदान पर जहाँ एक तरफ लोकजन के बीच

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

सामाजिक समन्वय का एक नया संदर्श प्रस्तुत करती है। वहीं अपने लघु स्वरूप को खोते हुए वृहद परम्परा का रूप धारण कर चुकी है। यह परम्परा तोड़ने के बजाए जोड़ने पर बल देती है। वस्तुतः इस शोध पत्र में प्राप्त तथ्यों को विविध स्तरों पर विश्लेषित करके निष्कर्ष एवं निर्मित अवधारणाओं को निम्नलिखित बिन्दुओं पर प्रस्तुत किया गया है :

लघु परम्परा से वृहद परम्परा की ओर

छठ पर्व आज अपने लघु स्वरूप को खोते हुए वृहद परम्परा की ओर बढ़ चला है। आज बिहार राज्य का क्षेत्रीय पर्व भारत का प्रमुख पर्व बन चुका है। मिल्टन सिंगर और राबर्ट रेडफिल्ड इस संदर्भ में कहते हैं कि जब किसी भी लघु परम्परा को क्षेत्रीय स्तर से राष्ट्रीय स्तर पर लोग स्वीकार करने लगते हैं तो उसे वृहद परम्परा कहते हैं। छठ पर्व भी आज इसी दिशा में आगे बढ़ रहा है। आज भारत के अधिकांश राज्यों में लोग छठ पर्व को बड़े ही हर्ष एवं उल्लास के साथ मना रहे हैं। आज अब यह पर्व बड़े स्तर पर लोगों द्वारा सम्पादित किया जा रहा है। इस पर्व की बढ़ती लोकप्रियता एवं बड़े स्तर पर लोकजन की स्वीकारोक्ति के कारण छठ परम्परा एक वृहद परम्परा का स्वरूप धारण कर चुकी है।

सामाजिक समन्वय एवं गतिशीलता

सामाजिक समन्वय किसी भी सामाजिक व्यवस्था का महत्वपूर्ण पक्ष होता है। सामाजिक समन्वय के अभाव में हम एक बेहतर समाज की कल्पना नहीं कर सकते हैं। व्यवस्था के अन्तर्गत सामाजिक समन्वय स्थापत्य हेतु ढेर सार कारक उत्तरदायी होते हैं। उसमें आज छठ भी एक महत्वपूर्ण कारक है। आज लोग छठ पर्व के माध्यम से समाज में प्रेम, बन्धुत्व एवं सामाजिक समन्वय की स्थापना कर रहे हैं। इन पक्षों के कारण मानव समाज गतिशील बना हुआ है।

जातोय सोपानक्रम का एक नया संदर्श

छठ पर्व एक ऐसा पर्व है जो सामाजिक संस्तरण की वैचारिकी से पूरो तरह दूर है, वैसे भारतीय इतिहास में हम देखें तो यहाँ जातीय सोपानक्रम का एक बड़ा महत्व रहा है। वैसे स्वतंत्र भारत में संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से जातीय सोपानक्रमों में उच्च्ता एवं निम्नता के क्रम को पूरी तरह से समाप्त किया गया है। भारत के छठ पर्व में भी जातीय सोपानक्रम का कोई महत्व नहीं है। गंगा एवं जलकुंड के किनारे लोग पानी में खड़े होकर लोग सूर्य को अर्घ्य देते हैं। वहाँ जातीय सोपानक्रम का कोई भाव नहीं होता है, बल्कि विभिन्न जाति के लोग एक साथ मिलकर सूर्य को अर्घ्य देते हैं। वास्तव में यह दृश्य एक तरफ जहाँ आध्यात्म से जुड़ा है तो वहीं दूसरी तरफ प्रेम, बन्धुत्व एवं भाईचारे की वैचारिकी को मजबूत करता है। मानवता का वास्तविक पाठ पढ़ाता है।

सामाजिक भेद की टूटती दीवारें

काल और परिस्थितियों के सापेक्ष दुनियां के अधिकांश देश सामाजिक भेद की वैचारिकी से पोषित

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

रहे हैं। हाँ कालक्रम में ये दीवारें जरूर टूटी एवं कमजोर हुई हैं। आज संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से इसे तृणमूल रूप से समाप्त कर दिया गया है। उसके बावजूद भी इलेक्ट्रानिक मीडिया, प्रिन्ट मीडिया एवं सोशल मीडिया के माध्यम से इस तरह की कुछ घटनायें देखन एवं सुनने को मिल रही है। यदि बात करें तो हम छठ पर्व की तो चयनित उत्तरदाताओं का मानना है कि छठ पर्व में सम्मिलित होने के उपरान्त अथवा सम्मिलित होने की प्रक्रिया के बीच जातीय सोपानक्रम का कोई प्रभाव नहीं होता है बल्कि इस पर्व में लोग सभी प्रकार के भेदों अथवा सोपानक्रम को मिलाकर सम्मिलित होते हैं। इस तथ्य से यह अवधारणा निर्मित होती है कि छठ पर्व की वैचारिकी जाति सोपानक्रम को धारण नहीं करती है, बल्कि यह वैचारिकी समन्वय एवं समानता को धारण करती है।

विविध स्तरों पर भी भेद की टूटती दीवारें

वैश्विक जगत में विविध स्तरों पर भेद की वैचारिकी काल और परिस्थितियों के सापेक्ष देखा जा सकता है। चाहे वह जाति आधारित हो, प्रजाति आधारित हो, वर्ग आधारित अथवा सम्प्रदाय या संस्कृति आधारित हो। वैसे मानव सभ्यता अपनी यात्रा में इस तरह के भेदों को अपने परम्परागत मूल्यों से, मानवतावादी दृष्टिकोण से एवं संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से समाप्त करने का सार्थक प्रयास किया है। फिर भी विविध स्तर पर भेद की दीवारों को देखा जा सकता है। छठ पर्व की वैचारिकी इस तरह के भेद को पूरी तरह से नकारती है। समरसता एवं समन्वय पर बल दती है। इस तथ्य को उत्तरदाताओं ने भी स्वीकार किया है। उत्तरदाताओं का मानना है कि छठ पर्व गंगा के किनारे अथवा तालाब के किनारे सम्पादित किया जाता है जिसमें सभी जाति और विचारधारा के लोग सम्मिलित होते हैं।

उत्तर आधुनिक के पायदान पर प्रकृति की सर्वोपरिता का संदर्श

आज मानव समाज अपनी विकासयात्रा में उत्तर आधुनिकता के मुहान पर खड़ी है, जहाँ लोग उपभोक्तावादी संस्कृति एवं बनावटी सुंदरता के साथ जीवन को गति दे रहे हैं। प्रकृति से दूर होने के कारण मानव विभिन्न समस्याओं का सामना भी कर रहा है। लेकिन इस उत्तर आधुनकता के पायदान पर भी छठ पर्व की वैचारिकी पूरी तरह प्रकृति के नजदीक है। इस पर्व के अन्तर्गत सम्पादित किए जाने वाले पक्ष पूरी तरह से प्रकृति आधारित ह जिसमें यह कामना की जाती है कि हे प्रकृति और सूर्य भगवान हमारी और आने वाली संततियों की रक्षा कर। इस तरह देखा जाय तो छठ पर्व वास्तव में प्रकृति की सर्वोपरिता का एक नया संदर्श प्रस्तुत करती है। यह पर्व पूरी तरह से प्रकृति पूजन पर आधारित है।

सहभागिता का नया संदर्श

सहभागिता के नये संदर्श से यहाँ तात्पर्य यह है कि छठ पर्व में पुरुषों, महिलाओं एवं बच्चों सभी

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

की भागीदारी होती है। भागीदारी में किसी प्रकार को कोई भेद नहीं होता है। सभी लोग एक साथ मिलकर इस पर्व का आयोजन करते हैं। इस पर्व में सहभागिता हेतु किसी को आमंत्रित नहीं किया जाता है, बल्कि सभी लोग इस सहभागिता में स्वयं आमंत्रित होते हैं और सामाजिक क्रियाओं के माध्यम से सामाजिक जीवन को क्रियाशील बनाते हैं। ये सभी पक्ष समाजशास्त्र की विषयवस्तु है।

लोकजन के मनोवैज्ञानिक पक्ष का एक प्रमुख अभिकरण

छठ पर्व जहाँ एक तरफ लोकजन के सांस्कृतिक पक्ष को दर्शाता है, वहीं दूसरी तरफ लोगों के मनोवैज्ञानिक पक्ष को भी मजबूत करता है। मानसिक रूप से लोगों को सुरक्षा प्रदान करता है। वास्तव में यह पर्व लोगों को प्रकृति आधारित जीवन जीने पर बल देता है। प्रकृति की शक्तियों का एहसास कराता है। सामूहिकता को प्रदर्शित करता है।

शाकाहारी जीवन को प्रोत्साहन

मानव सभ्यता अपनी यात्रा में शाकाहारी एवं मांसाहारी स्वरूप के साथ गतिमान रहा है। काल और परिस्थितियों के सापेक्ष प्रत्येक कालखण्डों में जीव हत्या के विरोध में आवाजें उठती रही है। भोज्य पदार्थों के साथ–साथ विविध धार्मिक कर्मकाण्डों म भी पशु–पक्षियों की बलि देने का प्रचलन रहा है। थोड़े बहुत अंतर के साथ उत्तर आधुनिकता के पायदान पर भी इन पक्षों को देखा जा सकता है। यह तो सिक्के का एक पक्ष है, यदि सिक्के के दूसरे पक्ष को हम देखें तो भारत के साथ दुनियां के अधिकांश ऐसे पर्व हैं, जो पशु–पक्षियों की हत्या के विरोध म खड़े हैं। इन्हीं पर्वों में भारत का एक प्रमुख पर्व छठ पर्व भी है। जो जीव हत्या को पूरी तरह से नकारता है। यह पर्व शाकाहारी जीवन पर बल देता है। जीव हत्या इस धरा का सबसे बड़ा पाप है। छठ पर्व इस पाप को समाप्त करने के लिए पूरी तरह से प्रतिबद्ध एवं गतिमान है।

धार्मिक कर्मकाण्ड एवं विश्वास की एक मजबूत अवधारणा

मानव सभ्यता धार्मिक कर्मकाण्डों एवं विश्वास की वैचारिकी से पोषित रही है। आज उत्तर आधुनिकता के पायदान पर मानव धार्मिक विश्वासों एवं कर्मकाण्डों से अपने को अलग नहीं कर पाया है। धार्मिक कर्मकाण्ड और विश्वास अनादि काल से चले आ रहे हैं। उत्तर आधुनिकता के पायदान पर इसके संरचना एवं प्रकार्य में कुछ परिवर्तन जरूर दृष्टिगोचर होते हैं। इन धार्मिक कर्मकाण्डों एवं विश्वासों को प्रकृति एवं ईश्वर के प्रति आस्था के रूप में देखा जा सकता है। इसी विश्वास की कड़ी में भारत के छठ पर्व को भी देखा जा सकता है। इस पर्व के अन्तर्गत लोकजन पूरी प्रतिबद्धता और निष्पक्षता के साथ अपने पद दायित्व का निर्वाह करते ह। घंटों–घंटों भर जल में खड़े होकर सूर्य को अर्घ्य देते हैं। उसके साथ–साथ कई दिनों तक महिलायें उपवास भी रखती हैं। इस कठिन साधना के पीछे उनका विश्वास है कि प्रकृति और सूर्य भगवान के पूजन से मानव संततियां सुरक्षित रहेंगी। वास्तव

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

में धार्मिक कर्मकाण्ड और विश्वास का यह स्वरूप एक मजबूत अवधारणा को जन्म देता है।

कर्मकाण्डी पक्षों में परम्पराओं एवं प्रकृति सम्बन्धित वस्तुओं का प्रयोग

विविध कर्मकाण्डों को हम देखें तो यह धर्म का एक क्रिया पक्ष भी है। यह धार्मिक एवं सामाजिक क्रिया प्रतीकात्मक स्वरूप है जिसमें हम पूजा, प्रार्थना, कीर्तन, भजन को देख सकते हैं। इनमें विभिनन पंथ, सम्प्रदाय अपने–अपने मूल्यों, मान्यताओं के द्वारा इसको संपादित करते हैं एवं विविध वस्तुओं को शामिल करते हैं, लेकिन छठ पर्व के अन्तर्गत किए जाने वाले कर्मकाण्ड प्री तरह से प्रकृति आधारित होते ह। वस्तुतः परम्परागत खाद्य पदार्थों एवं अन्य वस्तुओं को इसमें सम्मिलित किया जाता है। इस तथ्य के आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि छठ पर्व के अन्तर्गत की जाने वाली क्रियाएं, धार्मिक कर्मकाण्ड नहीं हैं, बल्कि मानव के जीवन जीने का एक ढंग है। उसकी अपनी एक संस्कृति है, जो अनावश्यक कृत्यों को नकारती हैं एवं प्रकृति आधारित चीजों को शामिल करती है। यह पर्व पूरी तरह से प्रकृति आधारित वस्तुओं का प्रयोग करता है। इन तथ्यों में यदि हम समाजशास्त्र को देखें तो मूल तथ्य यह उभरकर सामने आता है कि छठ पर्व कोई कर्मकाण्ड नहीं है, बल्कि जीवन जीने का एक ढंग है, एक पद्धति है, एक संस्कृति है, जो मानवीय मूल्यों के स्थापत्य पर बल देती है, आर्थिक बोझ को नकारती है।

सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना का एक अभिकरण

जब दो या दो से अधिक व्यक्ति एक साथ मिलते हैं, सामाजिक क्रियाओं में भागीदार होते हैं तो वे इससे निर्मित सामाजिक सम्बन्धों से एक सामाजिक व्यवस्था का निर्माण होता है। सामाजिक सम्बन्धों के अभाव में हम किसी भी सामाजिक व्यवस्था की कल्पना नहीं कर सकते। वैसे आज मानव सभ्यता प्राथमिक सम्बन्धों के बजाय द्वितीय सम्बन्धों की तरफ तेजी से बढ़ी है जो एक सामाजिक व्यवस्था एवं राष्ट्र निर्माण के लिए बेहतर नहीं है। दूसरी तरफ हम देखें तो छठ पर्व के माध्यम से सामाजिक सम्बन्धों को मजबूती प्रदान की जाती है। लोग भेद एवं द्वेष को भुलाकर बिना आमंत्रण के एक जगह इकट्ठा होते ह। वास्तव में सामाजिक सम्बन्धों के निर्माण की प्रक्रिया का यह एक अलग फलसफा है। इन तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि सामाजिक सम्बन्धों के निर्माण की प्रक्रिया में छठ पर्व भी एक महत्वपूर्ण अभिकरण के रूप में उत्तरदायी है।

छठ पर्व के बीच उत्तर आधुनिकता के पायदान पर भी लोकजन प्राथमिक सम्बन्धों की ओर

आज मानव सभ्यता अपनी यात्रा में उत्तर आधुनिकता के पायदान पर खड़ी है, जहाँ प्राथमिक सम्बन्धों की बजाय द्वितीयक सम्बन्धों का बोलबाला है, जो एक बेहतर समाज निर्माण के लिए खतरा है, लेकिन भारत में छठ पर्व द्वितीयक सम्बन्धों के बजाय प्राथमिक सम्बन्धों की तरफ आगे लेकर बढ़ रही है। इस पर्व में भागीदारी से प्राथमिक सम्बन्धों को मजबूती मिल रही है। लोग एक दूसरे की कृत्यों में

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

सहयोग एवं शामिल भी होते हैं। छठ पर्व के समाजशास्त्र को हम देखें तो छठ पर्व उत्तर आधुनिकता के पायदान पर भी प्राथमिक सम्बन्धों को स्थापित कर रहा है।

छठ पर्व में जाति, धर्म से परे सहभागिता

छठ पर्व हिन्दूओं का प्रमुख पर्व है। इस पर्व में सबसे अधिक सहभागिता हिन्दुओं की ही हाती है। लेकिन इधर कुछ समय से देखा जाय तो हिन्दू धर्म के साथ कुछ अन्य धर्मावलम्बी भी इसमें शामिल हो रहे हैं। जो मानवता के लिए नया संदर्श प्रस्तुत करता है। इस पर्व के माध्यम से कहा जा सकता है कि जाति, धर्म की दीवारे कमजोर पड़ी हैं।

छठ पर्व की मूल संकल्पना आगामी संततियों की रक्षा

छठ पर्व एक ऐसा पर्व है जो सतत विकास की अवधारणा पर आधारित है। छठ पर्व जहां एक तरफ मानव अस्तित्व के रक्षा हेतु प्रकृति को आधार मानती है, वहीं दूसरी तरफ छठ पर्व की वैचारिकी आने वाली संततियों के लिए पृष्ठभूमि भी तैयार करती है। इस पव के अन्तर्गत वर्तमान पीढ़ी अगली पीढ़ियों के रक्षार्थ ही कामना की जाती है। इस तरह देखा जाय तो यह पर्व पूरी तरह से मानवता के रक्षार्थ ही संकल्पित है।

समापन अवलोकन

छठ पर्व अपनी यात्रा में लघु परम्परा से वृहद परम्परा के पायदान पर पहुंच चुका है। स्थानीय विचारधारा क बजाय सार्वभौमिक विचारधारा के रूप में दृष्टिगोचर हैं जो उत्तर आधुनिकता के पायदान पर भी लोकजन के बीच सामाजिक समन्वय का नया संदर्श प्रस्तुत कर रहा है। वास्तव में यह पर्व एक ऐसा पर्व जो पूरी तरह से प्रकृति आधारित है। सामाजिक भेद एवं जातीय सोपानक्रम की वैचारिकी को नकारता है एवं सहभागिता का नया नया पाठ पढाता है। उत्तर आधुनिकता के पायदान पर भी यह पर्व जीव हत्या के विरोध में खड़ा है एवं शाकाहारी जीवन जीने पर बल देता है। वहीं धार्मिक कर्मकाण्डों और विश्वासो, अनावश्यक कृत्यों एवं अन्धविश्वासों के रूप में नहों, बल्कि एक जीवन शैली के रूप में लोग इसे स्वीकार कर रहे हैं। यह पर्व द्वितीयक सम्बन्धों के बजाय प्राथमिक सम्बन्धों को आगे बढ़ा रहा है और सतत विकास की अवधारणा को पूरी तरह से क्रियान्वित कर रहा है। यह पर्व क्षेत्रीय पर्व नहीं रह गया है लेकिन इसकी पहचान वैश्विक पहचान के रूप में हो रही है। यह पर्व लोकजन को तोड़ने की बजाय जोड़ने की वैचारिकी से पोषित कर रहा है। साथ ही इस पर्व में मानव एवं प्रकृति का सीधा संबंध है।

पठनीय ग्रन्थ

श्रीमदभावगत, गीताप्रेस, गोरखपुर।

सिंह, श्यामधर (2005): धर्म का समाजशास्त्र, सपना अशोक प्रकाशन, वाराणसी

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

दिनकर, रामधारी सिंह (2008): संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद

वर्मा, श्याम बहादुर (2009): भारत के मेले, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली

Srinivas, M. N. (1965): Religion and Society Among the Coorgs in South India, Asia Publishing House.

Tripathi, B. D. (2007): Sadhus of India: The Sociological View, Pilgrims Publishing, Varanasi.

Weber, Max (1993): The Sociology of Religion, Beacon Press.

Singh, Yogendra (1986): Modernization of Indian Tradition, Rawat Publications, New Delhi.

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language